

दूसरे सूरज की तलाश

नवीन पछी



चर्या प्रकाशन, जोधपुर



राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर
के आर्थिक सहयोग से प्रकाशित

चर्चा प्रकाशन
ब्रह्मपुरी पीपलिया,
जोधपुर-342001
जोधपुर
© नवीन पद्धि

प्रथम संस्करण 1992

आवरण
एस पी शर्मा

आलोक प्रेस,
जोधपुर

मूल्य 30 रुपये

123 बीकानेर

आइये चलें, नवीन पद्यों की कविता पुस्तक
'दूसरे सूरज की तलाश' का अध्ययन आरम्भ करें

हिन्दी की समकालीन कविता का उद्देश्य स्पष्ट करते हुए एक सम-कालीन प्रतिनिधि कवि बेदारनाथ मिह ने लिखा है—“समकालीन कविता एक उस सम्पूर्ण ढांचे के विरुद्ध जिस पर आज की स्थापित सत्ता और उच्चवर्गीय संस्कृति के खोलले मूल्य टंगे हुये हैं तथा उस कुचत्रपूर्ण दबाव के विरुद्ध जो उसे उस मूल ढांचे के भीतर भी अपनी विलक्षण प्रतिभा का स्थापित करन से रोकता है, एक सक्रिय विद्रोह की घोषणा है।” इसी सक्रिय विद्रोह की जो परम्परा तीव्र गति से विकसित हुई और अनेक युवा कवियों ने जिस तत्परता और ईमानदारी के साथ इस महत्त्वपूर्ण परम्परा को परिपुष्ट करने की भूमिका बनाई, नवीन पद्यों का नाम उही युवा कवियों में से एक है। “दूसरे सूरज की तलाश” कविता-संग्रह की अनेक छोड़ी बड़ी कविताओं में इसके कवि ने जहाँ एक ओर राष्ट्रीय लिनिज पर व्याप्त सव-ग्राही अघकार के विरुद्ध आक्रोश व्यक्त किया है वहीं दूसरी ओर आलोक के स्रोत रूप में “दूसरे सूरज” की तलाश से प्रयत्न भी किया है। रेखांकित करने की बात यह कि नवीन पद्यों ने स्निग्ध और शीतल प्रकाश के लिए किसी चन्द्रमा को नहीं तलाशा है, तलाश है आलोकमय दहकते ऊर्जा के परम स्रोत सूरज को।

हिन्दी की समकालीन कविता इस अर्थ में भी महान है कि राजनीतिक सलग्नता के बावजूद मानवीय आत्मीयता और रागात्मक समृद्धि अर्जित करने के लिए कवियों ने भरपूर धर्म और सजनात्मक संघर्ष किया है। नवीन पद्यों के इस कविता संग्रह की एक दर्जन से भी अधिक कविताएँ इसी मानवीय आत्मीयता एवं रागात्मकता से समृद्ध हैं। लेकिन जि दगी में रागात्मकता तथा आत्मीयता के साथ-साथ और भी बहुत सी चीजें हैं जो जि दगी का

नियमन किया करती हैं। इसीलिए जिन्दगी को पहचानन वाली दृष्टियाँ भी बहुरंगी तथा बहुपायायी हो जाया करती हैं। "आह" से उपजने वाली हिन्दी कविता परम्परा का समकालीन युवा कवि नवीन पछी समयुगीन मानवीय जिन्दगी को परिभाषित करते हुए लिखता है—

“जिन्दगी आंगुष्ठो का
अनुवाद नहीं है।
बेबसी ही इसका
पर्याय नहीं है।”

मानवीय जिन्दगी से यह पीडा, यह बेबसी सदा के लिए मिट जाए इस हेतु वह उही भोक्ता मनुष्यों को ललकारता है—

“तान लो सब मुट्टियाँ
तोड़ दो सूरज का सिर
फिर कभी उगने न पाये
भूख से भरे ये दिन”

एक समकालीन कवियों की वर्तमान पीढी सचेतन है, समझदार है। इसीलिए इनकी कविताओं में रम्यादमुद तत्वों की मजूपा कहीं भी निर्मित नहीं हुई है। समता पर आधारित वगहीन शोषणमुक्त समाज को स्थापित करने में लगे जनवादी सघपों को तीव्र स्वर प्रदान करना इस महान कविता परम्परा का रचनात्मक लक्ष्य है। नवीन पछी की कविता में इसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए निरंतर सघप की खोज और आत्मीय सलग्नता है। इस सघप की ढेर सारी कविताएँ उसी सघप के दौरान आई हुई जटिलताओं और विषमताओं से उलझती-मुलझती, निरंतर आगे बढ़ती रागात्मकता का, सचेतनता की तथा समझदारी से एक चेतनशील सजनात्मक उद्यम है। अगर इस युवा कवि का यह उद्यम निरंतर तथा अबाध गति से विकास की ओर बढ़ता गया तो ऐसे और कई कविता सग्रह प्रकाश पायेंगे जो समकालीन हिन्दी कविता की परम्परा को शिखर तक ले जाने में महत्वपूर्ण सहयोग करेंगे।

इ ही कुछ शब्दों के साथ हम इस सग्रह का अध्ययन प्रारंभ करें, दूसरे सूरज की तलाश में हम कवि का आत्मीय बनें, सहयात्री बनें।

(डा) विमल
सदस्य

जोधपुर

अध्यक्ष मंडल, अखिल भारतीय
जनवादी लेखक सघ, राजस्था

अपनी बात

“दूसरे सूरज की तलाश” का सफर तो जाने कितना पहले ही शुरू हो चुका है और जाने कब खत्म होगा। मे तो सिर्फ इस सफर में शरीक हुआ है, उन लोगों का हमसफर है जो लगातार दूसरे सूरज की तलाश में हैं।

जो यह सवाल उठाते हैं कि पहला गैर जरूरी हो गया क्या या इसे खारिज क्यों किया जाए ? मैं समझता हूँ कि उह इस सवाल का जवाब ढूँढना भी चाहिए—चाहे खुद के लिए। जो इस तरह का सवाल नहीं करते वे बिना कहे ही इस सफर में हमसफर हैं। मैं अपनी रचनाओं के बारे में खुद क्या कहूँ जो कहेंगे इह पढ़कर आप कहेंगे। मैं कुछ कहूँ तो ऐसा लगेगा गोया भाइने से पूछ रहा होऊँ कि मैं कैसा लग रहा हूँ। और जाहिर है भाईना अपनी भादत के मुताबिक मुझे भ्रम में ही रखेगा। बहरहाल।

ऐसे में, जबकि साहित्य में मेरा शैशव-काल चल रहा है, कुछ कविताएँ इकट्ठी कर उह किताब की शकल देने चल पडना है तो हास्यास्पद ही फिर भी इस अवस्था में कोई भी हास्यास्पद हरकत हो ही सकती है और वह यथासम्भव क्षम्य भी है। मैं और क्या कहूँ। मित्रों का, विशेष तौर पर, भाई दिनेश सिंदल का आग्रह था कि जब लिख ही रहे हो तो लिखा है उस सामने भी लानो ताकि तुम्हारी रचनाओं का भी छिद्रा-वेपण हो जाए। सो उनके ही बार-बार उकसाने के बाद अब यह कविता-संग्रह आपके सामने रखने की हिम्मत जुटाई है मैंने। रचनाएँ कैसी है इसका निणय पाठक के ही जिम्मे। हाँ, पाठकीय प्रतिक्रिया सिर-घाँघो पर।

मैं उन सभी स्वजनो, मित्रो और परिचितो का आभारी हूँ जिं होन इस “कविता संग्रह” के प्रकाशन के लिए मेरा हीसला बढाया। भाई दिनेश का विशेष आभारी इसलिए हूँ कि उ होने ही शुरू स आखिर तक मेरा सिरदद मोल लिया।

और क्या कहूँ ?

अधरे की उस दहलीज को समर्पित
जहा से तमाम भोवरे श्रीर बदरग
इसानी रिश्न रोगनी की हृद में
छिनगने के लिए निक्ल पडते हैं ।

अनुक्रम

आईना	9
उनकी शर्तों पर	10
साजिश	11
सदम झपने झपने	12
वेदना के वृत्त	13
चेहरे डरावने	14
चुप्पी	16
फुटबाल ग्रीर दिन	17
में वो नहीं रहा	19
धो खेहरा	21
वह	22
जिजीविषा	23
सम्बन्धों के चित्र	24
सत्रास	25
यत्रणाघर	26
जखडन	27
वह ठड से मरा है ?	29
उलझी आकृतिमा	30
नियति	31
इन्कीसर्वी सदी में	33
तुम	34
पगलायी प्रतीक्षा	35

तुम्हारी मुस्कराहट	36
जीवन अभिज्ञाप	37
मिलसिला	38
जि दगी	39
घापका शगल	40
दीवारें बालती भी हैं	42
गुलगत शब्द भुनसा प्रथं	44
डरा हुआ डर	45
घुटन	48
वाह बहादुर !	50
बाबा और बच्चे	51
वीटी फूँकने से	53
बच्चा और माँ	54
मुग्गे, मुगियाँ और भ्राम्मी	56
प्रतिप्रश्न	57
याद	58
गूरज	59
आदमी और सतह	60
चाँद	62
पूँटी पर	62
सबक	63
सीमा रेखा	64
प्रतिबद्धता	65
अहंताम	66
भिमटते सानाटे	67
ग्राम	68
रोगनी के लिए	69
टीस	70
तुम्हारे बिना	71
अधरे क खिलाफ छिड़ी जग	74
बदननी होगी शहर की परिभाषा	75
हंस	76
बटवारा	78

आईना

‘आई ना’

अब नहीं कहूँगा

अब कहूँगा

आईना तुम्ह

छवि नहीं निहारूँगा

लेकिन

चाहूँगा सहज कर

सम्हल कर रबू

आईना

इस पर कोई गद नहीं जमे

न ही कोई दरार आए

आईना कभी पटक कर

चकनाचूर भी न हो ।

उनकी शर्तों पर

उनकी शर्तों पर
जीना है
अब आपको
गर मजूर हो तो
फिर कीजिए कोशिश
जिंदा भर रहने की

छोड़ दीजिए
अपनी शर्तों पर जीने की
प्रतिबद्धता

सवाल अभी तक वही है
उनकी शर्तें मान भी लीं
तो क्या हागा
कोई जिंदा रह सकेगा ?

साजिश

मेरा देश
फिर
दो हिस्सों में
बट गया है
एक सूने से सट गया
दूजा बाढ़ में बह गया
दोनों हिस्सों के बीच
एक सौदागर
देश को बेच देने के
मूढ़ में खड़ा है ।
मैं सोचता हूँ
इस देश का
वर्तमान
भूत
भविष्य
कब छूटेगा
पुरतनी सौदागरो के
शिकजो से ।

सदभं अपने अपने

माना
उनकी कोई भी खुशी
समय के सदभ से
जुडी नहीं रह सकती
मगर
एसा बयू होता है कि
उनक आसू ही
प्रासगिक हुआ करत है
हर वक्त ।

वेदना के घूत

घामो कुछ दूर तक टहल आए
जहा वही मिले
जीने का समय ठूँड साए
मीन रहने से वही अन्ध है
जीवन से कुछ मवाद हो जाए
जीवन वही मिल तो कुछ दिन बहन जाए
रास्ता चलते तय करन से बहतर है
साथ साथ चला जाए

स्मृतिया की हद तक टूट कर बिगरे
मन-विचित्र की
फिर से जोड़ने का उपक्रम करें
कुछ तो हो निगम जड़ता टूट
घामपीठियों से पीछा छूटे
घलत रहे तो घलता घना घन
वार्ता
हम-सुष्ट पर लेन
य वेदना व घूत ।

चेहरे डरावने

अपने चारा और घिर चेहरा स
मत डरो बच्चे !

चहर अब/उतने भयानक और डरावने कहा रहे है ?

तुम अबमर वाले चहरा स डरा करत हा
अधेरे म सहम जाया करत हो
यह डर मन स निवाल दा बच्चे
अब जरूरत है
अधेर और काल चेहरा स नहीं
बकानोध रोगनी
और कहीं-कहीं उजले चहरो से
फकत सावधान रहने की
मनलव यह बनई नहीं कि
हमशा अधेर म रहो
रास्त म विखरी रस्सिया की
भाप समनजर डरत रहो
और रागनी म पलायन करो
नहीं ।
रागनी उतनी ही जरूरी है
जिगनी कि भायें पचा सकें ।

तुम अभी बच्चे हो
 भेद और भेदिया व भेद से परे
 एवदम सच्च बच्चे हो
 तुम्हारा सफर अभी शुरू हुआ है
 ऊबड़-खाबड़ रास्त जानना जरूरी है
 जीवन के रंग म ड्यना भी चाहिए तुम्ह
 दुनिया का नक्शा ध्यान म दग्यो
 तुम्ह अभीका भिन्नता और द्रग्ण्ड भा
 हिटलर की कन्न ता वही बाधा की तस्वीर भी
 हर तस्वीर म
 हर रंग और रूप से चेहर पाभ्राग
 बच्चे ।
 दुनिया सिफ टी वी स्कीन म ही मिमटी नहीं है
 वह बहूत बडी है
 तुम्हारी कल्पना स भी बडी ।
 तुम अपने काले लोस्त म
 नफरत कन्न नग हा
 जबकि बच्चे
 दोस्ती का ताद रग नहीं होना
 न काला
 न गोरा ।

चुप्पी

हैं ।
यह सही है कि
मैंने कभी
चुप रहने का
तुमसे वादा किया था ।
मगर
हमारे इस शतनामे मे
यह तय नहीं हुआ था कि
तुम कुछ भी कहते रहोगे
और
मैं नपु सक मौन खेलत हुए
अपनी चुप्पी कभी तोड़ूँ नहीं
मेरे मुखरित मौन से
घबरा रहे हो दोस्त ?
शायद जान गय हा
मेरी चुप्पी भी
कितनी-कितनी
खतरनाक हो सकती है
तुम्हारे लिए ।

फुटबाल और दिन

मुझे बच्चा समझकर
तुमने आज फिर
एक नया दिन
फुटबाल की तरह
उछाल दिया है मेरी आर

मैंने तुम्हारे
फुटबालनुमा दिन का
लपक लिया है
अपनी दहलीज पर खड़े
तुम दबत रहोगे कि
मैं कैसे खेलता हूँ इससे
तुमने दिन की शकल में
चुनौती दी है मुझे
और मैं चुनौती को
अपने बाबा की पगड़ी से
तोलता हूँ ।

तुम्ह विश्वास न हो तो
साभ म देचना
तुम्हारे दिन का मैंने
पचर हुए वनेडर की
शकल म कैसे बदल दिया है ।

तुम्हारी भूल है कि
तुमने मुझे वच्चा समभा
यही जानकर दिन को
फुटबाल की तरह
उछाला है तुमने मेरी आर

अब तो मानत हो
फुटबाल और दिन मे
कोई फत्र नहीं है मरे लिए

मैं भरी दोपहरी मे भी
नगी मडक पर
रोदता जाता हूँ
तुम्हारा हर दिन
मैं अब वच्चा नहीं रहा
बता देना चाहता हूँ ।

मे वो नहीं रहा

वो बचपन

काफी पीछे छूट चुका

जब डरा करता था मैं

नये पहाड की ऊँचाइयो म

धब तो

पहाड पर चढने क साय छटा है

हमकी चोटी पर

डर का ठोकर मार दी मैं

दृष्टि की विस्तार पाने की

छूट भी द दी मैंने

घासमान के मौन से

मायापच्ची बनने का भी

मादा है मुझमे ।

इस सब के बावजूद

गहराइयो के प्रति

सजग भी हैं

तुम्ह विश्वास न हो तो
साभ म देखना
तुम्हारे दिन का मैंने
पचर हुए ठोडर की
शकन मे कैसे बदल टिया है ।

तुम्हारी भूल है कि
तुमने मुझे कच्चा समझा
यही जानकर दिन को
फुटबाल की तरह
उछाला है तुमने मेरी ओर

अब तो मानत हो
फुटबाल और दिन म
कोई फक नहीं है मरे लिए

मैं भरी दोगहरी म भी
नगी मडक पर
रोदता जाता हूँ
तुम्हारा हर दिन
मैं अब बच्चा नहीं रहा
बता देना चाहता हूँ ।

मैं वो नहीं रहा

बो बचपन
काफ़ी पीछे छूट चुका
जब डरा करता था मैं
नगे पहाड़ की ऊँचाइयों में
अब तो
पहाड़ पर चढ़ने के माय खड़ा हूँ
इसकी चोटी पर
डर को ठोकर मार दी मैंने

दृष्टि को विस्तार पाने की
छूट भी दे दी मैंने
घासमान के भीत में
मायापच्ची करने का भी
मादा है मुझमें ।

इस सब के बावजूद
गहरा-यों के प्रति
सजग भी हूँ

चूग कर चौरासी होने की
 गलती भी नहीं करना चाहता
 एक बार जमीन स उठा तो
 उठा चाहता है लगातार
 पुद की आसमानी हाथा के
 हवाले करन का नियम भी मेरा है ।
 पहाड़ की चोटी ने बदल डाला है
 उम्र का समीकरण
 बहुत बदल गया है मैं ।

चोटी पर खड़ा होकर
 मूरज की घूर सकता हूँ अब
 बचपन भी नया कमाल है
 कल्पना लोक से बाहर की
 हर मामूली बात से
 डरा दता है
 सुनो बचपन ।
 मैं हसना चाहता हूँ
 तुम्हारे बचपन पर ।

वो चेहरा

तहा-तहा सा एक चेहरा
लम्हा-लम्हा भीड़ में खोया
सहमा-सहमा उसका साया
बतरा-बतरा सून का रोया

भटकन-भटकन क्या कुछ पाया
गदिश में वह पागल साया
दुनिया से फिर जा टकराया
जिसका भी सग उसने पाया
घोखा खाया, धक्का खाया
फिर कुछ भी उसक हाथ न आया

मजर-मजर देख रहा है
खजर-खजर तौल रहा है
बजर-बजर डोल रहा है
जगल-जगल खोज रहा है
शजर शजर पर
नाम किसी का।

वह

तपती दोपहर मे
कोलतार की सड़क पर
आसमान से उतरता लावा
और
नगे पाव/पसीने से लथपथ
हाथ ठेले मे धूप लादे
रेंगता है वह ।

गदन से चिपका गिरेवान
जेब म खनकते चंद सिक्क
सिक्का की खनक से
बार-बार सिहर उठता है वह ।

शाम बहुत दूर तो नहीं
घर पर बीबी-बच्चे
चूल्हा-चीका
राह तकत सब
जब सामने होंग सभी
तब क्या करेगा वह ?
काश !
ठेले की तरह ही
हर शाम को भी
टेल सकता दूर तक
देर तक
सोचता है
वह ।

जिजीविषा

साम की सीमा के
पार पहुँच जाओगे
हार कर मौन के
द्वार पहुँच जाओगे
मुक्तिपथ खोज रहे हो
मुक्तिबोध हा जाओगे

जोश का जनाजा
निरस्त रहा है फिर भी
पत्थरों के सीने में
प्यार टूट रहे हो
अर्थ की अभिलाषा में
अर्थहीन हो रहे हो
जिजीविषा की जिद्द पर
फिर भी अड़े हुए हो

राशनी की चाह में
धुआँ-धुआँ हो रहे हो
अजनबीपन से भाग कर
अपनापन टूट रहे हो
जान कब से तुम
अपने आप में
दूर भाग रहे हो ।

सम्बन्धों के चित्र

रिश्ता जोड़ने की बात पर
तुम्हारे साथ हो लिया
हम इतनी दूर चले
मगर
अजनबी बने रहे/आज तक

विश्वास का सेतु/आस्था का इन्द्रधनुष
बघी टूट गया अचानक
मैं ईमानदार था/घब भी हूँ
न जाने की बात क्या है कि
तुमने अपने शूँष की परिधि में
कोई रंग नहीं भरा

जीवन के समीकरण में उलझे रहे
पर सम्बन्धों में नहीं सुलझे/मौन रहे
सवाद से सहमत रहे ।
एक बात मानो
अपने मन का कनवास फलाफो
उस पर दूँगे अनगिनत चित्र
चाहो तो उनमें से चुन लेना
कुछ अपने लिए
और
फिर उह देना जिन्दगी के व रंग
जिन्ह
विश्वास/सम्बन्ध/और आस्था
कहते हैं ।

सत्रास

पहाड पर चलने का
निमंत्रण दे रहे हो दोस्त
जीवन से पलायन
सिखा रहे हो दोस्त
शहर की शराफत (?) से
परेशान हो शायद
पहाड पर भी तो
अपनी पीडाए ही परसोगे

चाहते ही हो अगर शहर से कटना
तो भीड मे भी रहा जा सकता है अकेला
शहर मे कम से कम जिन्ना तो हो
वहा पहाड पर सास लेना भी
मुश्किल होगा

पहाड को तुम नही पहचानते
वहा भी सघाटे के परधम लहराते हैं
यहा पत्थरा से पूछा है कभी
तुमने उनक अकेलेपन का सख ?
अकेलेपन से
क्यू विरे रहना चाहते हो तुम ?

घुटन कहा नही है ?
मरना ही चाहत हो तुम
तो अकेले मे क्या
भीड की भगदड मे
बर्पा मर नही सकत ?

यत्रणाघर

यत्रणाघर की 'साउण्ड प्रूफ' दीवारों में कैद
अनगिनत चेहरे/दम तोड़ती चीखें
पागल करार दिये गये लोगों का आतनाद ।

ये चीखें-चिल्लाहटें और आतनाद
सब मिल कर मजबूर नहीं कर सकते पिघलने के लिए
इन दीवारों के पार की दुनिया को
हमारा माहौल जीने का भ्रम दर्शाता है

लगता है रेहन रखी जिंदगी को
मूदखोर हालात के पजों से
छुड़ाने की तमाम कोशिशों के बीच
उम्र जवाब दे गई है/गोया
जिंदगी मगलूणा हो गई है
पानी मर चुका है हमारी आँखों का
उनमें कतरा-कतरा खून जमा होने की भी
गु जाइश नहीं रही है ।

बदलाव की बात करने वाले
मासूम नहीं जानते कि बदलाव के लिए
अधी गुफाआ से गुजरना होगा
शित्तिज पर हजारों लाखा बार
टापना होगा/नया सूरज
ताकि
उसकी तपिश से/पिघल जाए/या कि
तिलमिला कर तड़क जाए
यत्रणाघर की खोफनाक दीवारों ।

जकडन

वक्त की मार से
जजर हुई दीवार
झीर/दीवार से
चिपका है बँलेण्डर

इसकी तारीखों में छुपे हैं
बीमार दिन/मुर्दा रातें/झपाहिज चुशियाँ
नपु सक इच्छायें/मजबूर महत्वाकांक्षायें
इसके झलावा
हर बार पर सवार उपवास ।

शुन्र है
तारीखो वाले इस बँलेण्डर पर
खोखली/झूठी/हसो/मरी मुस्वान लिए
कोई तस्वीर नही है
कयोकि
बँलेण्डर सरकारी है
झीर सरकार के पास
चुशिया नही होती/वोटने को
वरना

हर मुकद नाम
 उारे हुए बेहरों को
 गिनाती रहती तस्वीर ।
 हो गयता है
 वह दौर भी घाए
 जब गिरें लगी तमाम दीवारें
 बंद छिडपी-परवाजा को
 रजरअराज करती
 रोशनदान के रास्त
 सरसराती हवा
 भीतर बली घाये
 तब
 फ्लेण्डर के पना का बजूद
 पडपडा उटठे
 मुमकिन है
 हवा के गुस्से से
 बिखर जाए क्लेण्डर के पने ।
 मगर, होगा क्या ?
 दिन
 महीने
 साल
 तारीखो की लम्बी कतार
 तब भी बधी रहगी

आदमी पैनाइश स ही
 तारीखो म उतर जाता है
 ताउन्न शेनता है
 तखिया तारीखो की
 क्याकि
 इती तारीखो म लिपटा वह
 तवारोख म बदत जाता है ।

वह ठंड से मरा है ?

मौसम की तमाम धमकियों के बावजूद
शहर के एक वीरान चौराहे पर
योजना भवन की दीवार के सहारे
नितांत अकेला/उरझ बैठा वह
रही कागज और चिथड़ों से जलाये प्रलाव में
सारी रात सर्दी को भोक्ता रहा
गर्मी के बहलाव में
सास की धौकनी धोक्ता रहा
ठंड में ठिठुरता पिल्ला
कू डू डू करता रहा/वह विसूरता रहा
शहर सोता रहा
अचानक ! गर्मी सिपाही को देखकर
अवड गया उसका ममूचा बजूद काप कर
सिपाही ने टोका/लाठी से ठोका
फिर छोड़ दिया ठहाका
वह रह गया/ठगा-सा !
चार दिन स
खाली पड़े पट म
गाठी घसी थी
सिपाही क चेहरे प हसी थी
उमकी साम गले में फमी थी
रात चश्मदीद गवाह है
वह कुछ देर पहले मरा है
मुझह हाशिय में बंद
अखबार की मुखिया थी
'मिछारी ठंड स मरा है ।

उलझी आकृतियाँ

दीवार के सीने से
धीरे-धीरे
धूप का आचल सरकने लगा
घोर
देखते-देखते
दिन शम से
अपने आप में
सिमटने लगा
मु डेर पर
साँझ की उदासी
तारी होने लगी
आँगन के कोनों में दुबकी
खामोशियाँ छूटपटाने लगी
अजनबी कदमों की आहट से
सिहर उठा सझाटा !
गहराती साँझ में
उभर-उभर आती है
एक अनजान आकृति
आकृति के बाद
आकृतियाँ का
तम्बा/भन्तहीन सिलसिला !
शून्य में
कैसे सिमटा/किसे महसास ?
आकृतियाँ उलझ गईं
उलझी आकृतियाँ में ।

नियति

कभी-कभी भ्रममनसाहत का
ढाग रचना
बनिए की कमीनगी है
किसने जाना है
उसकी मुस्कराहट में भी
मनो-मन जहर भरा है

सुनो दोस्त !
उसके बहकावे में न धाँसा
गौर करो
बनिया पकरा बनिया है
कभी किसी का हमदद नहीं हो सकता
खून पीना/हड्डिया चूमना/ठाठ से जीना
उसकी आदत है
घोर शायद
बनियापन को जिंदा रखने की
परम्परागत मजबूरी ।

कल

इसका बाप यही किया करता था

आज

खुद ऐसा ही कर रहा है

कल

उसका बेटा भी यही करेगा

सच !

कल आज और कल में

कुछ भी तो बदलाव नहीं दिखता

होरी/घनिया/बनिया

हर युग में रहे है/रहेंगे

हम वैसे ही चौराहा पर

रस्तराघो में

घटा शब्दों की जुगाली में

दिन काटते रहेंगे

अथ का स्वाद फिर भी नहीं मिलेगा

प्रेम में जड़ी तस्वीर की तरह

काठ टर पर बैठा बनिया

मुस्कराता रहेगा हम पर

हम अंधेरे में हैं

उधर बचारगी का बुन बना बनिया

अपने तीस नाखून से

नोच रहा है अथ का जिस

जिस पर किटकिटा रहा है

ममूषा प्रजात-त्र

हर रात कराहा में बट रही है

बनिया मंदिर की पटिया

घटा टनटनाता रहेगा

बाहर टरबा बोई डीठ ममूषा रहेगा

सब एक ही घतगा ।'

इक्कीसवीं सदी में

नींद बटेगी साथ में सपने भी बटेंगे
मगर
बाटने वालों के सामने
रोटी का सवाल
फिर भी
बिचाराधीन रहेगा ।
तुम निरें बच्चे हों
जो 'बयू' में खड़े हों
अंधी गली के मोड़ पर
अधरे में लिपटी नींद बट रही है ।
तुम बहकाए जा रहे हो दोस्त ।
नींद भीख में बटने की चीज नहीं होती
उसे कभी तो भ्राना है
पट खाली हो या भरा
नींद तो आएगी
तुम बाटने वाले हाथों तक पहुँचोगे
तब तक हाथ सिमट जायेंगे
और/फिर
सुबह ही जाएगी ।
जीवन-चक्र ऐसे ही चलेगा
आज नींद बट रही है
कल खैन घट जाएगा
जब भागना पड़ेगा तुम्हें
राशन पाड पर
चद सातो की खातिर ।

तुम

पढ की छाल जैसे
वषो उतार दी जाती है
तुम्हारी अस्मिता की खाल ?
तुम इंसान हो
बज्रबान पेड़-पत्थर नहीं

तुम्हें खिलौना समझा जा रहा है
और तुम
खड़े रहते हो मौन ठूठ की तरह
अपनी आँखों के आगे
तुम्हें नगा बिया जा रहा है
इसी तरह खामोश रह तो
वह दिन दूर नहीं
जब देखते देखते
तुम्हें जगल बना दिया जाएगा
फिर
मौतम भी तुम्हारा नहीं रहेगा
इसीलिए जरूरी है कि
पाँश कॉलोनियो के
आभिजात्य पेड़ों की तरह
तुम भी अपने चारों ओर खीच लो
एक बाड़ काटो की/ताकि
कोई भी तुम्हारे वजूद पर
कुन्हाड़ी न चना मक ।
मुनो भाई ! अपनी हथेलियों की तरह
रुद को जानना
वह
वेहद जरूरी है ।

पगलायी प्रतीक्षा

पगलायी प्रतीक्षा में
कटते रहे है हम
पल पल हर क्षण
बटते रहे है हम
बोनी होती उम्मीदें
श्रीर
उम्मीदो से ज्यादा
ऊचा उठा आसमान ।
आसमान रहा भजनबी
दरारें ही दरारें
टुकडो मे बटता आसमान
न जुड पाने की स्थिति तक

हम प्रतीक्षारत हैं/वेशक
प्रतीक्षा की नियति/पगला जाना हो
कुछ प्रतीक्षा मे/कुछ उम्मीद मे
हजारो-लाखो आँखें
आसमान तक रही हैं
आसमान तकती हुई आँखो के साथ
उठने लगे है हाथ
मुमकिन है
ऊचा उठने की इस प्रक्रिया मे
उम्मीद और आसमान की ऊचाई म
कुछ भी फक न रहे
काश ! वह सप्हा भी आए
जब आत्मी आसमान जिननी खुशियां
सभेटन क काबिल हो जाए ।

तुम

पेड की छाल जैसे
बयो उतार दी जाती है
तुम्हारी अस्मिता की खाल ?
तुम इ सान हो
बजुबान पेड-पत्थर नहीं

तुम्ह खिलौना समझा जा रहा है
श्रीर तुम
खडे रहते हो मीन ठूठ की तरह
अपनी आखा के भाग
तुम्ह नगा किया जा रहा है
इसी तरह खामोश रहे तो
बह दिन दूर नहीं
जब देखत देखते
तुम्ह जगल बना गिया जाएगा
फिर
मौसम भी तुम्हारा नहीं रहेगा
इसीलिए जरूरी है कि
पाश कॉलोनियो के
आभिजात्य पढो की तरह
तुम भी अपने चारो ओर खीच लो
एक बाड काटो की/ताकि
कोई भी तुम्हारे बजूद पर
कुल्हाडी न चला सके ।
सुनो भाई ! अपनी हथेलिया की तरह
रुद को जानना
वेहद वेहद जरूरी है ।

तुम्हारी मुस्कराहट

तुम मुस्करा नहीं सकत
मुस्करान का ढोंग रचते हो
जब भी ऐसा किया तुमने
कितने नकली लगे हर बार
तुम्हार हाँठो पर खिच आई
इच-डट इच मुस्वान
किननी जहरीली हूमा करती है
इसस बखबर हो तुम
जो न जान सके तुम्ह अब तक
उह जरूर अच्छे लग सकत हा
तुम्हार इस तरह
बकत बबकत जहर उगलन से अच्छा है
तुम्हारा घामोश रहना ।

सिलसिला

चौराह उलझे हैं आपस में
शहर में बढ़ती भीड़ के
प्रश्न पर ।
दूर चिराग की लौ भी
उलझी है अंधेरे की
तानाशाही स ।
सभी उलझनें अंधहीन हैं
भीड़ रोदती रहेगी
चौराहा के साने
और
अंधेरा अंधेरे में करता रहेगा
लगातार लौ के साथ बलात्कार ।
परिणाम वक्त के क्षितिज पर झूल जाएगा
दुघटनाएँ होगी
भीड़ में/चौराहों पर ।
लाशों का अंधशास्त्र
नियता बना रहेगा व्यवस्था का
बलात्कार की शिकार रातें
पदा करेंगी
अनचाही अनगिनत सिसकियाँ ।
मजबूरियाँ के मजर
तय करत रहेंगे अपना सफर ।
सुबह से शाम तक चलता रहेगा
दुघटनाओं का अतहीन सिलसिला ।

आपका शगल

इस सदी का चेहरा तो
पहले ही खून से लथपथ है
श्रीर
आप हैं कि
फिर एक नया चेहरा
हूँ ढने निकले, है ।
समय के जजर शरीर पर
एक श्रीर चेहरा टागना चाहत हैं
पुराने चेहरे की परवाह किए बिना

आप बदलाव चाहत हैं
जिन्दगी की सलवटें
माफ कराना चाहते हैं
तो फिर
पुराने चेहरे का क्या हागा
खून से लिथडे
इस सदी के चेहरे का
क्या होगा ।
इस तरह चेहरे बदलते रह
तो उनके भाव कहा ठहरेंगे

दीवारें बोलती भी हैं

'दीवारों के कान हुआ करते हैं'
सुनता आया हूँ बचपन से
अब यह भी जान गया हूँ कि
वे बेजुबान भी नहीं होती ।
कहावत हकीकत बनी है
मैंने सुनी कहानी
इसी दीवारों की जबानी

दीवारों ने देखा
दीवारों ने कहा
दीवारों से ही मैंने सुना
इन्हीं की आँखों के आँसु
तुम लड़की से औरत
बनी या बना दी गई थी
हम दोनों के बीच
अलगाव पड़ा किया गया
परिवर्तन की इस प्रक्रिया में
मेरे विश्वास की
हत्या कितनी बार हुई
उससे तुम्हें सरोकार नहीं

कच्चे घीर भुने गोशत के
 शौकीनो ने
 अपना जायका बदलने की खातिर
 गम गोशत की व्यवस्था जो कर ली थी
 गोशत हो या कोई घीर चीज
 हमेशा गम कभी नहीं रहती
 जायका बदलने वाले
 अपने मूड के मुताबिक
 हर ठंडी बासी चीज
 उठा कर फेंक देने में
 देर नहीं लगात
 अब तुम घीरत बन चुकी हो
 लडकी से घीरत बनने तक का
 तुमने अपनी महत्वाकांक्षाओं के
 गलियारों से गुजरत हुए
 देह-विज्ञान की भाँगा पड़े
 तय किया है
 तुम्हारा सफर
 उही लुटेरों की बन्तों के
 जहाँ हूँ ड ली बन्तों के
 क्याकि,
 मरे खण्डों के
 अब दम

सुलगते शब्द झुलसते अर्थ

जीवन रूटीन बन गया है
घोर में रूटीन में
गति डूब रहा हूँ
आज इतवार है
(निकम्पेन का हर दिन इतवार हुमा करना है)
छत पर बैठे सड़ों की घूम में लिपटे
पिता अखबार पढ़ रहे हैं
मैं नहीं जानना चाहता कि
कौन किसे पढ़ रहा है
पिता अखबार/या
अखबार पिता का चेहरा
पिता का चेहरा
उम्र की एक हद तक
पुराना पढ़ चुका है
घोर
दापहर बाद अखबार खुद-ब-खुद
हमशा की तरह बासी पड़ जाएगा
इस पुराने घोर बासीपन के बीच
किसी लिजलिजे अहसास की तरह
घिसटता हुमा इतवार भी निकल जाएगा
मैं पिता अखबार और इनवार से
बचता-बचाता निकल जाना चाहता हूँ
क्याकि
मैं अखबार और पिता में से
किसी का सामना नहीं कर सकता
घोर
इतवार में तो कतरई नहीं ।

डरा हुआ डर

गांव और शहर
घरने लगे हैं
डर से नहीं
बल्कि
उस भावी क्षण से
जो खून में लिथडा
मिलता है उह
आदमी आदमी से डरे
तो कोई बात भी है
मगर
परछाई तक से डरे
एसा क्यों ?
गोली कही भी चले
सप्ताटा फल जाता है

1. वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

वे वे वाकास

ଶୁଣି ମଉଜର ଧରଣ
 ଦେ ଧରଣୀ ଦେ ସେ
 ଧରି ଧରି ଧରି ଧରି
 ଦେ ଧରି ଦେ ଧରି
 ଧରି ଧରି ଧରି ଧରି
 ଧରି ଧରି ଧରି ଧରି
 ଧରି ଧରି ଧରି ଧରି
 ଧରି ଧରି ଧରି ଧରି
 ଧରି ଧରି ଧରି ଧରି
 ଧରି ଧରି ଧରି ଧରି
 ଧରି ଧରି ଧରି ଧରି
 ଧରି ଧରି ଧରି ଧରି

ଧରି

बाह बहादुर !

किसी भी शहर के
 किसी भी गली-चौराहे स
 रात-रात भर
 लगातार सीटी बजाता
 डडा पटकारता
 जब कोई मोरघा-चौकीदार गुजरता है
 तब दुनिया नींद में डूबी हुई होती है
 पहली तारीख की
 जब वह हाथ में रजिस्टर उठाए
 दहरी पर खडा होता है
 तब झलसाईं घावाज में
 सवाल दागा जाता है—
 बहादुर ! तुमने कितने दिन नागा की
 क्या कहे वह
 कितनी रातें उसने
 सोय बिना काट दी ।
 बहादुर ! अपनी ईमानदारी पर
 लग प्रश्नांच ह के बावजद
 कभी डिस्टव नही होता
 हस देता है एक ईमानदार हसी
 वह जानता है अच्छा तरह कि
 खुले में रहने वालो की
 बद दिमागो की बातो का
 बुरा नही मानना चाहिए
 इसीलिए ता हर महीन वह
 मुस्कराता/सलाम बजाता
 पांच हफ्तली पकडे लोट जाता है ।

सुनना नहीं चाहत
 बच्चे जान गए हैं
 राजा ता
 वही भी
 कभी भी
 हो सकता है
 लेकिन
 वह दयानु हा
 यह जरूरी नहीं
 बढत हुए बच्चे
 शायद कभी नहीं
 समझ पाएंग कि
 अब कहानी सुनना
 सपन से भी वही ज्यादा
 बाबा की नींद के लिए जरूरी है
 बाबा हैरान हैं
 किसी मासूम जिद् के बिना
 बचपन का सफर
 वसे मुकम्मल होगा
 बच्चे जिद् बयो नहीं करत
 उलझे हैं बाबा इसी म ।

सुनना नहीं चाहत
 बच्चे जान गए हैं
 राजा ता
 कही भी
 कभी भी
 हो सकता है
 लेकिन
 वह दयालु हा
 यह जरूरी नहीं
 बढत हुए बच्च
 शायद कभी नहीं
 समझ पाएंगे कि
 अब कहानी सुनना
 बचपन से भी कही ज्यादा
 बाबा की नींद के लिए जरूरी है
 बाबा हैरान हैं
 किसी मासूम जिद्द के बिना
 बचपन का सफर
 कैसे मुकम्मल होगा
 बच्चे जिद्द बयो नहीं करते
 उलझे हैं बाबा इसी म ।

बच्चा और माँ

माँ का पल्लू पकड़े
घर भर में घूमता बच्चा
हरदम
अपनी सुरक्षा के प्रति
आश्वस्त है
मुझे बच्चे की ओर उसकी
आश्वस्तता से ईर्ष्या है
मुझे न जाने क्यों
उसकी सुरक्षा का विश्वास
दिन-ब-दिन
घटता-सा नजर माने लगा है
अभी तो खैर
बच्चा मस्त है
क्योंकि अभी उसका घर है
घर में माँ भी हैं
कभी—कभी
माँ के दूर चल जाने पर
उसका पल्लू छूट जाने पर
बच्चा चीख पड़ता है
उसकी सुरक्षा का भाव
खतरे में पड़ जाता है
मैं साचता हूँ
कल क्या होगा
जब बच्चा बड़ा होगा
मैं भी कल तक बच्चा था
मगर अब नहीं रहा
मन का हर मौसम भेलने वाला

घादमी हो गया हूँ
 हर घादमी का
 इस उम्र में
 माँ, घर और गाँव रहे
 यह मुझकित ता नहीं
 बच्चा अभी मस्त है
 क्योंकि
 वह बच्चा जो है
 जहाँ मैं हूँ
 वहाँ सिर्फ
 घोरत है
 मैंने हमेशा इसके चेहरे में
 अपनी माँ का चेहरा
 दूँ ढने की नाकाम कोशिशों की हूँ
 मैं भूल गया था
 वह घोरत माँ हँसिज नहीं हो सकती
 हा
 वह माम ममा घोर मम्मी जरूर है
 मेरी माँ का चेहरा
 अब तस्वीर में जडा है
 घोर
 तस्वीर गाँव में है
 तभी कहता हूँ, बच्चे !
 धीरे-धीरे
 माँ से कुछ दूर रहने की
 कोशिश करो/घादत बनाओ
 बल बचपन बीत जाने पर
 हर मा-नुमा चेहरे में
 तुम्हें मेरी तरह
 माँ की तलाशने का
 पागलपन उठे सो...

मुर्गे, मुर्गिया और आदमी

मुर्गे, मुर्गियो का दम
घुटने लगा है दडबो म
वे बाहर निकल आए हैं
और फुदक रह हैं मस्ती मे
आदमी भी घुट रहा है
लकिन वह डरने लगा है
और दुबक कर
अपने दडबों म धुम गया है
मुर्गे-मुर्गिया देखीफ हैं
और आदमी खीफजदा
आदमी स
डरा
लुटा
पिटा
सिमट रहा है लुद म
यह बात
किसी एक गाव, एक शहर, एक मजहब की नहीं
आदमी और आदमियत क
दिन-ब-दिन बढ़ते जा रह
बोनेपन की है ।

प्रतिप्रश्न

जब भी मैं इस राह से गुजरा हूँ
पेड़ो ने घाते-जाते
मुझसे अनगिनत सवाल किए हैं
तुम्हारे बारे में
मैं उबलता गया
एक दिन
पेड़ खामोश थे
और मैं उनसे पूछ बठा
तुम्हें छोड़कर जाने वाल
क्यों नहीं लौटे अब तक ।
मेने देखा
पेड़ एकाएक
घीघ मु ह गिर पडे
मैं सोचने लगा हू कि
मैं पेड़ क्यों नहीं हुआ ?

याद

तुमने
हि़साब की
पुरानी बापी की तरह
मुझे फिर
याद किया है
शायद
मर लेते
कुछ भीर ज़रम
बनाया हागे ।

सूरज

कोई तो सूरज से
 पूछे कभी
 क्यों झुलसता है
 हर रोज

किसकी खातिर
 किस पाप का अभिशाप
 दो रहा है
 और
 आखिर कब तक
 डोता रहगा ?

**आदमी और सतह
(मुक्तिबोध माफ़ करे)**

सतह से उठते
आदमी की
वात करने से पहल
आदमी और सतह को
मलग मलग
जान लेना जरूरी है !

चाँद

चाँद ने बादलो मे से
भाँक कर एक दिन
मुझसे कहा—
भाज बहुत घुश दिख रह हो
भाज तुम्ह
चाँदनी का
एक कतरा भी नहीं मिलेगा ।
मैं
चाँद से पूछना चाहता था
कर्मा-कभी खुश दिखने का
नाटक करा भी
जुम होता है
क्या ?

खूँटी पर

खूँटी से उतार कर
समीज पहनने की तरह
आपस में मिल लेते हैं
लोग, आजकल
एक-दूसरे से दूर होत ही
समीज फिर टग जाती है
खूँटी पर ।

संक्षेप

पहले किसी और ने पूछा था
आज तुमने पूछा है
मेरी उदासी का सबब
जवाब अब भी दूँगा
मगर
जाने से पहले
कम से कम
तुम तो बता देना
तुम्हारे बाद आने वाले को
इस सवाल का
क्या जवाब दूँ ?
बताओ,
सवाल खरा है कि नहीं ।

सीमा रेखा

घर म बिना पूछे
घुस सकते हो
पास बठने के लिए भी
'एक्सव्यूज मी' के तबल्लुफ की
कोई जरूरत नहीं
लेकिन
अपनी दुनिया म
तुम्हारी घुसपठ से
वेबजह डिस्टब होना
मुझे बतई मजूर नहीं।

प्रतिबद्धता

परत

परत के नीचे

परत

फिर परत

परत-दर-परत

प्याज की परिणति

या

तुम्हारी प्रगतिशीलता की

भुरभुरी सच्चाई ?

अहसास

कु कुम टीका लगा कर
जीवन-समर की खातिर
माँ ने मुझे
देहरी से ही
विदा कर दिया था
फिर भी
एसा क्या लगता है कि
माँ अब भी हर वक़्त
मरे साथ है ।

सिमटते सप्ताटे

बितने बोभित हुआ करत हूँ
वे क्षण
जब आत्मियता बदल जाती है
प्रनात्मियता में

एक साथ जीये हुए क्षण
बन जाते हैं
इतिहास के पन्ने
और
उनमें सिमट जाती है
एकान्तिक उदासियाँ !
तुम्हारे शहर के
कोलाहल से दूर
मेरा विश्व
धीमे-धीमे
सिमट जाता है मुझमें
दूरियाँ कुछ और दूर तक
खदेड देती हैं
सप्ताटे की दिशाओं व
मोड़ पर खड़ा मैं
चिल्ला-चिल्ला कर
प्रपनी यादों की
भीड़ भी तो नहीं जुटा सकता ।

शाम

शाम की आँख से
फिर टपका आसू
आँसुओं में दद
तोलती है शाम

रात की तहार्ई में
डरने लगी है शाम
अपने ही आप से बस
बोलने लगी है शाम

इस शाम का एसा
मजर तो देखिए
जाने किसके खौफ से
खजर बनी है शाम

दिन की रोशनी में
लुटा गया है दिन
लुटने का सबब जाना
तो पकर पड़ी शाम

रोशनी के लिए

हां !
मैं गुनहगार हूँ
फिर भी
राशनी का
तलबगार हूँ
अंधी गली व
मरे हमसफर
मुझे और तुम्ह/रोशनी से सराबोर
एक मोड़ की जरूरत है ।

टोस

मा
इस ज म मे तो
प्यार नहीं पा सका
मैं तुम्हारा
कोई बात नहीं
फिर ज म लूँगा
तुम्हारी ही कोख स ।
हो सकता है
अगले ज म मे
शायद पसीज जाओ तुम
मेरे लिए
धौर दे सको
वह प्यार
जो चाहता रहा हू तुमस
धौर
वह प्यार
मिलना ही चाहिए ।
माँ ! मेरा तो कुछ नहीं
तुम्हारे वजूद का
नकारूँगा नहीं कभी
नहीं कहूँगा कि
तुमने कभी
मुझे बेटा नहीं कहा ।
मगर
मैं यह भी तो
नहीं चाहूँगा कि
मेरे बाद तुम्हें कोई
माँ ही नहीं कह ।

तुम्हारे बिना

सभी कल परसों की ही तो बात है

जब तुमने जाते-जात

हिदायतों दी थी मुझे

“देखो मेरे पीछे

घर अस्त-व्यस्त न रखना

समय पर या पी लेना

घोर सुनो

देर रात तक

भटकना भी मत बाहर”

मैं तुम्हारे कहे मुताबिक

घर को करीने से रख रहा हूँ

खान-पीने में नागा नहीं करता

भटकना भी कहाँ होता है अब

अपने-आपते ही

बाहर तो निकल नहीं पाता ।

कहने का मतलब यह कि

सब कुछ वैसा ही चल रहा है

जैसा छोड़ गई थी तुम ।

हाँ

एक बात जरूर हुई है इस बीच
 जिस पर मेरा भी तो
 कोई वश नहीं ।
 सबको बिखरने से
 बचान की कोशिश मे
 तुम्हारे बिना
 खुद कितना बिखर रहा हूँ
 अपन रेशे-रेशे होते रहने का
 ग्रहसास भी होने लगा है
 बिखर रहा हूँ लगातार ।
 तुम बस यही सोच कर आना कि
 तुम्ह और कुछ नहीं करना होगा—लौटकर
 मुझे समेटने के सिवा ।
 तुम नहीं हा यहा
 तो लगता है
 घर भर मे हो
 (तुम्हारे बिना भी इसे घर कहूँ ?)
 पहले बहम था कि
 तुम्हारी सीमा
 सिफ किचन की दहलीज तक ही है ।
 मगर
 अब सोचता हूँ/दिखता हूँ
 घर का ऐसा कौनसा कोना है
 जहाँ तुम नहीं रची-बसी हो ।
 हाँ !
 अब तुम लिखना
 बब हो रही है वापसी तुम्हारी
 मैं तो चाहता ही हूँ जानना
 मरे साथ-साथ
 इस घर की दर चीज
 जोह रही है बाट तुम्हारी

पर की चौखट तो
तुम्हारे जाते ही
उदास हो गई बचारी
कैसे समझाऊँ उसे
किसी के जाते ही
जल्दी लौट घाने की
उम्मीद करना बेमानी है
पर
चौखट का भपना दद है
घोर
मेरा भपना ।
कौन किसे
बहलाए
समझाए ।
लेकिन
तुम फिर न करना
यो मैं ठीक ठाक हूँ ।
यह तो बस यू ही
तुम्हारी याद मे
भीग आई प्राखें
पोछने से पहले के वक्त का
क्षणिक भावेग था ।
चाहो तो
कुछ भी नाम दे सकती हो
इस मन स्थिति को
वैसे
भव एकदम ठीक हूँ
तुम चिंता फिर भी
मत करना
साथी ।

अधेरे के खिलाफ छिडो जग

मुश्किल नहीं है
जधी गली का
सफर तय करना
गर रोशन रहे
हमारे भीतर का
सूरज
घोर
इस गली के
घाघिरी मोड़ पर
जब सवेरा होगा
भोर की पहली किरण की
शमशीर से
टुकड़े टुकड़े हुए
अधेरे के बदन का खून
पूरब के क्षितिज पर
फल जायेगा
डरो मत
तुम्हारी दहलीज पर
सूरज जब सिज्दा करे
तुम खोल देना
तमाम खिडकिया-दरवाजे
ताजा हवा के झोक चल घायेंगे भीतर
बद कमरे की घुटन
भरभरा कर ढह जाएगी
धूप फल जायगी आगन में
घोर कोना-कोना
जी उठेगा ।

बदलनी होगी शहर की परिभाषा

शहर को मुर्दा किसने कहा
शहर मुर्दा नहीं है
वह अँधेरे से
घातकित भी नहीं है
देखा नहीं
फिजा रोशनी से सराबोर है
प्रभी कुछ देर पहले ही
किसी ने क्षितिज पर
भाग का गोला फेंका है
मरघटी बहे जा रहे
मुर्दा शहर की जिंदा लाशों
जिंदगी के लाम पर
लडने की खातिर/चीराहो पर
घा खड़ी हुई हैं।
तुमने सिफ उनके चेहरे पढे हैं
घाँसो को पढो
तुम्ह मिलेगी उनमे जिजीविषा
जि दा मनुष्य म पदा हुई
हरारत को कभी महसूस तुमने ?
शहर जी उठा है।
शहर क सिर पर तने आकाश म
चील गिद्ध को मडरात देख
तुमने कैसे माना कि यह शहर मुर्दा है ?
तुमने घपने पूर्वाग्रह को
बेमानी शब्दो म डाला है
तुम्हे ये बासी शब्द वापस लेन हाने
बदलनी हापी धारणाए
धमशान म खडे रह कर शहर को तोलते ही
यह क्या मजाक करते हो ?

हथ

तुम बहुत खुश हो कि
तुमने मुझे मिट्टी भ मिला दिया
मह मत भूलो
मिट्टी मे मिल कर भी
मे मिट्टी पलीद कर सकता हूँ तुम्हारी

याद रखो
यही मिट्टी
घाँस मे घस कर
तुम्हें ढला भी सकती है ।
बहुत नाज है
तुम्हें अपनी ऊँचाइयो पर
जमीन पर भाक कर देखो जरा
जिस इमारत पर खड़े
घभी इतरा रहे हो
तुम्हें मासूम नहीं है
उसी इमारत की
नीव के पत्थर
जमीन बदलने के लिए
कुलबुला रहे है
फिर कहा रहगी
तुम्हारी ये ऊँचाइयाँ
गगनचुम्बी दम्भ की इमारत
हरहरा कर ढेर होगी
वह दिन भी दूर नहीं

जब तुम और तुम्हारी
मक्कारी के आयोजन
एक साथ मिट्टी में मिलेंगे
आज उधार के उजालो पर
इतरा रहे हो
कल अपने ही अंधेरो से
सिहर जाओगे ।
तब कहा रहेगा फर्क
तुम्हारे और मेरे बीच
ऐसा हुआ तो
(ऐसा तो होगा ही)
अपने हर कदम पर बढ़ने के बाद
पीछे छोटे निशानो को देखकर
सहम जाओगे/लडखडाओगे
और
टकराव का रास्ता पकड़ लेने के
अपने गलत निणय पर
रोओगे-पछताओगे भी
तब अपना ही सिर फोड़ने के लिए
तुम्हें इंट-परवर
कुछ भी नहीं मिलेंगे
क्योंकि
तब तक ये सभी तुम्हारी कर्माणि हैं
मेरी तरह वाकिफ हो चुकें हैं
और
तुम्हारे पास
स्यापे के सिवा
करने को कुछ नहीं बचेगा
फिर
मिट्टी में मिला है
तुम्हारी निम्न निम्न के निम्न के निम्न ॥

बटवारा

जमीन बटेगी
तो क्या
आकाश भी बटेगा
फुछ रहे शेष उससे पहले
बहतर होगा
हम खुद को एक-दूजे स काट लें
इस घर को वाट ले
शुरुआत मा से हा
उसक दो वक्ष हैं
एक तुम ले ली
और एक मैं ले लूँ ।
फासले बढ चुके हैं
फसला हो चुका है
अब हम भायुकता क भवर से
किनारा कर लें ।
मगर याद रह
इसके लिए जिम्मेदार
केवल हम हैं
हमारे बच्चे नहीं
बटन और वाटने की बात
हमारे ही आगन से उठी है
इसी आगन की मु डेर से
मुनादी भी होनी चाहिए कि

हम टुकड़ो-टुकड़ो में
बट रहे हैं बट रहे ह
रिश्तो के जखमी होने के बाद
हमारे बीच दीवार होगी
जिसके दोनो ओर
चद मुट्ठी धूप/टुकड़ा-टुकड़ा घासमान
(शायद)

पश्चाताप के आँसू
खून के गाढ़पन का
बीता ग्रहसास
ओर

अपने-अपने हिस्से का
अकेलापन होगा ।
याद रहे प्यारे भाई
अपनी खड़ी की गई दीवार से
लिपट कर कभी रोना नहीं
खुली आँख कभी सोना नहीं
क्योकि

बटवारा तो हमने ही तय किया
फिर रोना कसा ?

भस्म हुई भावनाओ
ओर

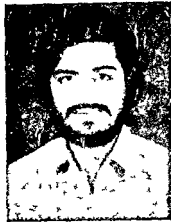
आँख से टपके खारे पानी को भी
अपना कहने का अधिकार
हमारा नहीं रहेगा
तुम्हें अपना हिस्सा चाहिए/मिलगा
फिर मुझ भी मजबूरन
दूसरा हिस्सा अपना कहना ही पडेगा
ताकि

कल हमारे बच्चे कह सकें—
चाचा ! यह घर मेरा है

ताऊ ' यह मेरे मटके का पानी है ।
 यह सब होना था
 और हुआ भी ।
 फिर भी
 इतना तो बता दो
 कल अगर हम
 फिर मिले श्मशान में
 तब वहाँ मेरा हिस्सा
 कितना होगा
 वहाँ मैं भी तो चाहूँगा
 ब ट वा रा
 जिससे मुर्दा रिश्ती को
 दफन कर सकूँ ।
 मकान हो या मरघट
 हर जगह बटनी चाहिए ।
 तुम्हें याद होगा
 श्मशान की भूमि को
 भतीत हो चुके हमारे सप्टा ने
 समाज को दान दी थी
 इसीलिए तो
 माँ की कोख से मरघट के कलेजे तक
 हमारा झटूट लेकिन
 धनचाहा रिश्ता है ।
 तुमन सिफ
 अपने हिस्से पर सोचा है
 बटने और बाटने की
 इस यात्रा के बीच
 तुम पूछ कितनी इनादियों में
 बट चुक हो
 इस बात का अहसास भी
 है क्या तुम्हें ?

जनगण
स्ती से
प्रपादक

दूरदशन
घोषक,
रूप मे



नवीन पछी

—मेडता रोड (राज) 20 नवम्बर, 1959

—एम ए (दशन शास्त्र, हिन्दी)

—दैनिक राजस्थान पत्रिका, जलतेदीप, जनगण
और प्रतिनिधि मखबारो के माघ ही दिल्ली से
प्रकाशित मासिक 'क्षरण' मे बतौर उप-सपादक

—भावाशवाणी जावपुर, जयपुर और दरदशन
के द्र, जयपुर मे काफी समय तक उदयोषक,
प्रस्तुती सहायक और रचनाकार के रूप मे
सबद्ध

—सन् 1978 से रगमच से जुडाव

—नई दिल्ली मे भारत सरकार की नौकरी

—55/4 सी, सेंटर-II, डी आई जेड एरिया,
कालीबाडी माग, गोल मार्केट,